संहितास्कन्ध

डा० धनञ्जय वासुदेव द्विवेदी

सहायक प्रोफेसर, संस्कृत विभाग,

डा० श्यामा प्रसाद मुखर्जी विश्वविद्यालय, राँची

संहितास्कन्ध का स्वरूप निरूपित करते हुए देवर्षि नारद कहते हैं कि संहितास्कन्ध में ग्रहों की गति, वर्षलक्षण, तिथि, दिन, नक्षत्र, योग, करण, मुहूर्त, सूर्यसंक्रान्ति, ग्रहगोचर, चन्द्रमा और तारा का बल, लग्न और ऋतु दर्शन का विचार, गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, अन्नप्राशन, चूडाकरण, कर्णवेध, उपनयन, मौंजीबन्धन, वेदारम्भ, समावर्तन, विवाह, प्रतिष्ठा, गृहलक्षण, यात्रा, गृहप्रवेश आदि के मुहूर्त आदि, तत्कालवृष्टिज्ञान तथा कर्मविपाक आदि विषयों का वर्णन हुआ है-

संहिताशास्त्ररूपं च ग्रहचारोऽब्दलक्षणम्।

तिथिवासरनक्षत्रयोगतिथ्यर्द्धसंज्ञकाः।।

मुहूर्तोपग्रहाः सूर्यसंक्रान्तिर्गोचरः क्रमात्।

चन्द्रता राबलं चैव सर्वलग्नार्तवाह्वयः।।

आधानपुंससीमंतजातनामान्नभुक्तयः।

चौलङ्कर्ण्यपणं मौञ्जी क्षुरिकाबन्धनं तथा।।

समावर्तनवैवाहप्रतिष्ठासद्मलक्षणम्।

यात्राप्रवेशनं सद्योवृष्टिः कर्मविलक्षणम्।।

उत्पत्तिलक्षणं चैव सर्वं संक्षेपतो ब्रुवे।

एकं दश शतं चैव सहस्रायुतलक्षकम्।।

संस्कृतवाङ्मय का बृहद् इतिहास के ज्योतिषशास्त्र खण्ड में प्रभाव की दृष्टि संहिता को तीन भाग में विभक्त किया गया है- 1. दिव्य प्रभाव, 2. नाभस प्रभाव, 3. भौम प्रभाव। इन सब के भीतर वास्तुविद्या, भूगर्भविद्या, वृष्टिविद्या, सामुद्रिकशास्त्र, स्वरविद्या, अर्घविद्या, धातुविज्ञान, सुभिक्ष-दुर्भिक्षविद्या,

E-Learning material prepared by Dr. Dhananjay Vasudeo Dwivedi

प्रतिमाविद्या, रश्मिविद्या, जीवविद्या, वनस्पतिविद्या, कूर्मविद्या, नक्षत्रव्यूहविद्या, मुहूर्तविद्या आदि का अध्ययन किया जाता है। गृहारम्भ विधि, वास्तुभूमि परीक्षण, वास्तुस्थापत्य प्रभृति वास्तुविद्या के अन्तर्गत आते हैं। भूकम्प, ज्वालामुखी, भुम्यन्तर्वर्ती जलस्तर तथा जलीय स्रोत, धातु, रत्न, शक्ति के विभिन्न स्रोत, भूपृष्ठीय विभाग भूगर्भविद्या के अन्तर्गत आते हैं। वर्षा, वातावरण, मौसम, जलवायु, भूगोलीय कटिबन्ध विभाग वातचक्र आदि वृष्टिविद्या के अन्तर्गत आते हैं। प्रकृति, आकृति, लक्षण, चेष्टा, गति, स्वर, मानसिक चेतना, अंगलक्षण, हस्तरेखा एवं चिह्नों के निर्धारण के द्वारा मानवीय शुभाशुभ प्रदर्शक सामुद्रिक विद्या है। शरीरस्थ ब्रह्माण्ड को व्यक्त करने का प्रत्यक्ष विधान प्रस्तुत करने वाली विद्या स्वरविद्या है। पदार्थ एवं सस्य आदि की वृद्धि, ह्रास, विनाश एवं तेजी-मन्दी आदि का निर्धारण करने वाली विद्या अर्घविद्या है। भू-उत्खनन से प्राप्त खनिज, धातुरत्न, धातुशोधन प्रभृति विषय धातुविज्ञान के हैं। पृथिवी पर होने वाले सुभिक्ष तथा दुर्भिक्ष का अध्ययन करने वाली विद्या सुभिक्ष-दुर्भिक्षविद्या है। मूर्तिनिर्माण, मूर्तिभेद, मूर्तिलक्षण, प्रकृतिविकार, देवप्रतिमादि विधान प्रतिमाविद्या का प्रतिपाद्य है। प्रकाश, प्रकाशपुञ्ज, प्रकाशवर्ण, प्रकाशतरंग आदि इनके शुभाशुभ का प्रतिपादन करने वाली विद्या रश्मिविद्या है। विभिन्न गोलीय रश्मिपुञ्जों का अपवर्तन, परावर्तन, ग्रहगोलीय गुरुत्वाकर्षणानुरोध से सघन एवं विरल माध्यमों में संचरण, वर्णभेद प्रभृति इसी विद्या के अन्तर्गत आते हैं। मानव, पशु, पक्षी, कीट, सरीसृप, पतंग, प्रभृति के आकृति, प्रकृति, चेष्टा, गुण, दोष प्रभृति का 18 प्रकार से अध्ययन जीवविद्या के अन्तर्गत है। वनस्पतिविद्या के अन्तर्गत वनस्पतियाँ, औषधिवर्ग वनस्पति चिकित्सा, ग्रहों तथा नक्षत्रों से सम्बद्ध वनस्पतियाँ तथा वनस्पतियों का त्रिगोलीय सम्बन्ध प्रभृति आते हैं। ग्रहों तथा नक्षत्रों का स्थानाधिपत्य, देशाधिपत्य आदि का अध्ययन कूर्मविद्या के अन्तर्गत आता है। नक्षत्रव्यूहविद्या के अन्तर्गत नक्षत्रों तथा ग्रहों का चराचर जीव तथा पदार्थगत सम्बन्ध वर्णित है। गुरुत्वाकर्षण प्रभाव का भूगोलाभिप्रायिक रूप दिग्गजविद्या का विषय है। एक अहोरात्र में निर्दिष्ट लघुकालखंड का कार्य, कर्ता एवं काल का दिग्देशकाल भेदानुरोध से शुभाशुभत्व का निर्धारण मुहूर्तविद्या का मुख्य प्रतिपाद्य है।

E-Learning material prepared by Dr. Dhananjay Vasudeo Dwivedi

बृहत्संहिता में संहिताज्योतिष से सम्बन्धित प्रचुर सामग्री प्राप्त होती है। विस्तारभय से कतिपय सन्दर्भों का उल्लेखमात्र किया जा रहा है-

- वृक्षों में फल तथा फलों की वृद्धि देखकर द्रव्यों की सुलभता तथा धान्यों की निष्पत्ति जाननी चाहिए-

फलकुसुमसम्पवृद्धिं वनस्पतीनां विलोक्य विज्ञेयम्।

पाण्डूकः क्षीरिकया नीलाशोकेन सूकरकः।।

- ✓ वटवृक्ष से यव, तिन्दुक से साठी धान्य और पीपल से सब धान्यों की वृद्धि देखनी चाहिए-

न्यग्रोधेन तु यवकस्तिन्दुकवृच्या च षष्टिको भवति।

अश्वत्थेन ज्ञेया निष्पत्तिः सर्वसस्यानाम्।।

- जो व्यक्ति सुगन्धित पुष्प, फल, समुद्र से उत्पन्न रत्न, सुवर्ण, वस्त्र, धेनु, वृष, पायसयुत भोजन, द्रव्य, दधि, सुगन्धित धूप और चन्दन से विधिपूर्वक अर्घ देता है वह नीरोग रहता है और शत्रुओं को जीतता है-

कालोद्भवैः सुरभिभिः कुसुमैः फलैश्च रत्नैश्च सागरभवैः कनकाम्बरैश्च।

धेन्वा वृषेण परमान्नयुतैश्च भक्ष्यैर्दध्यक्षतैः सुरभिधूपविलेपनैश्च।।

नरपतिरिममर्घं श्रद्दधानो दधानः प्रविगतगददोषो निर्जितारातिपक्षः।

- उत्तरफल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, पुनर्वसु, मृगशिरा, अश्विनी ये सात नक्षत्र वायव्य मण्डल के हैं। यदि इनमें से किसी नक्षत्र में भूकम्प हो तो इसके सात दिन पूर्व आगे कथित लक्षण होते हैं। धूम से व्याप्त दिशा वाला आकाश होता है, पृथिवी से धूलि उड़ाती हुई और वृक्षों को तोड़ती हुई हवा चलती है और सूर्य के किरण मन्द हो जाते हैं। वायव्य भूकम्प होने पर धान्य, जल और वनौषधियों का नाश होता है तथा बनियों को शोथ, दमा, उन्माद, ज्वर, खाँसी, से उत्पन्न पीड़ा होती है-

चत्वार्यार्यम्णाद्यान्यादित्यं मृगशिरोऽश्वयुक् चेति।

E-Learning material prepared by Dr. Dhananjay Vasudeo Dwivedi

मण्डलमेतद्वायव्यमस्य रूपाणि सप्ताहात्।।

धूमाकुलीकृताशे नभसि नभस्वान् रजः क्षिपन् भौमम्।

विरुजन्द्रुमांश्च विचरति रविरपटुकरावभासी च।।

वायव्ये भूकम्पे सस्याम्बुवनौषधीक्षयोऽभिहितः।

श्वयथुश्वासोन्मादज्वरकासभवो वणिक्पीडा।।

- देवस्थानों में यात्रा के समय गाड़ी की धुरी, पहिया, युग या ध्वजा का भङ्ग होना, गिरना, उलटना, सादन या कहीं पर चिपट जाना देश और राजा के शुभकारी है-

दैवतयात्राशकटाक्षचक्रयुगकेतुभङ्गपतनानि।

सम्पर्यासनसादनसङ्गश्च न देशनृपशुभदाः।।

- यदि वास्तुभूमि पूर्व या उत्तर में ऊँची हो तो पुत्र और धन का नाश, दुर्गन्धयुक्त हो तो पुत्र का नाश, टेढ़ी हो तो बन्धुओं का नाश और दृग्भ्रम हो तो स्त्रियों को गर्भ का अभाव होता है। घर की वृद्धि चाहने वाला मनुष्य वास्तुभूमि को चारों तरफ समान रूप से बढ़ावे। यदि वास्तुभूमि को बढ़ाना हो तो उत्तर या पूर्व की ओर बढ़ावे क्योंकि उसे तरफ बढ़ाने से अल्पदोष हैं-

प्रागुत्तरोन्नते धनसुतक्षयः सुतवधश्च दुर्गन्धे।

वक्रे बन्धुविनाशो न सन्ति गर्भाश्च दिङ्मूढे।।

इच्छेद्यपि गृहवृद्धिं ततः समन्ताद्विवर्धयेत्तुल्यम्।

- ईशान कोण में देवगृह, अग्निकोण में पाकगृह, नैऋत्य कोण में गृह सामग्रीगृह और वायव्य कोण में धन-धान्य स्थापन गृह बनाना चाहिए-

ऐशान्यां देवगृहं महानसं चापि कार्यमाग्नेय्याम्।

नैऋत्यां भाण्डोपस्करोऽर्थधान्यानि मारुत्याम्।।

E-Learning material prepared by Dr. Dhananjay Vasudeo Dwivedi

- शिवजी की प्रतिमा के मस्तक पर चन्द्रकला बनावे, ध्वजा में वृष का चिह्न बनावे, ललाट में खडा तीसरा नेत्र बनावे, एक हाथ में त्रिशूल और दूसरे में पिनाक नामक धनुष धारण करावे अथवा बाईं तरफ आगे भाग में पार्वती की प्रतिमा बनावे-

शम्भोः शिरसीन्दुकला वृषध्वजोऽक्षि च तृतीयामपि चोर्ध्वम्।

शूलं धनुः पिनाकं वामार्धे वा गिरिसुतार्धम्।।

- एक वृक्ष से दूसरा वृक्ष बीस हाथ पर लगाना उत्तम, सोलह हाथ पर मध्यम और बारह हाथ पर लगना अधम होता है-

उत्तमं विंशतिर्हस्ता मध्यमं षोडशान्तरम्।

स्थानात् स्थानान्तरं कार्यं वृक्षाणां द्वादशावरम्।।

- गुरु, रवि और भौमवासरों, मृगशिरा, पुष्य, मुल, श्रवण, पुनर्वसु तथा हस्त नक्षत्रों में, रिक्ता, अमावस्या, द्वादशी, षष्ठी और अष्टमी तिथियों को छोडकर शेष तिथियों में गर्भमासपति के बलवान रहने पर, आठवें तथा छठे मास में शुभग्रहों के केन्द्र एवं त्रिकोण भावों में स्थित रहने पर पापग्रहों के 3, 6, 11 भावों में जाने पर सीमन्त संस्कार शुभ होता है। ध्रुवसंज्ञक एवं रेवती नक्षत्रों में शुभ ग्रहों के वासरों में तथा पुरुष लग्न के नवमांश में सीमन्त कर्म शुभ होता है-

जीवार्कारदिने मृगेज्यनिर्ऋतिश्रोत्रादितिब्रध्नभैः रिक्तामार्करसाष्टवर्ज्यतिथिभिर्मासाधिपे पीवरे।

सीमन्तोऽष्टमषष्ठमासि शुभदैः केन्द्रत्रिकोणे खलैर्लाभारित्रिषु वा ध्रुवान्त्यसदहे लग्ने च पुंभाशके।।

- यात्रा में षष्ठी, द्वादशी, अष्टमी, शुक्लपक्ष की प्रतिपदा, पूर्णिमा, अमावस्या तथा रिक्ता संज्ञक तिथियाँ अशुभ कही गई हैं। अश्विनी, पुनर्वसु, अनुराधा, मृगशिरा, पुष्य, रेवती, हस्त, श्रवण और धनिष्ठा नक्षत्रों में यात्रा प्रशस्त होती है-

न षष्ठी न च द्वादशी नाऽष्टमी नो सिताद्या तिथिः पूर्णिमाऽमा न रिक्ता।

हयादित्यमैत्रेन्दुजीवान्त्यहस्तश्रवोवासवैरेव यात्रा प्रशस्ता।।

E-Learning material prepared by Dr. Dhananjay Vasudeo Dwivedi

- पूर्व दिशा में ज्येष्ठा नक्षत्र, सोम और शनिवार को, दक्षिण दिशा में पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र और गुरुवार को, पश्चिम दिशा में रोहिणी नक्षत्र और रवि एवं शुक्रवार को तथा उत्तर दिशा में उत्तराफल्गुनी नक्षत्र, मंगलवार एवं बुधवार को अपने धन, विजय और जीवन की अभिलाषा रखने वाले व्यक्ति को यात्रा नहीं करनी चाहिए-

न पूर्वदिशि शक्रभे न विधुसौरिवारे तथा न चाजपदभे गुरौ यमदिशीनदैत्येज्ययोः।
न पाशिदिशि धातृभे कुजबुधेऽर्यमक्षे तथा न सौम्यककुभि व्रजेत्स्वजयजीवितार्थी बुधः।।

E-Learning material prepared by Dr. Dhananjay Vasudeo Dwivedi